Vagdhara: A Multilingual Peer Reviewed Research Journal (ISSN 2839-6197)
Vol. 1 No. 3 (2026): April-June; Website: https://vagdhara.in/index.php

मिस रमिया दलित नारी की पीड़ा और प्रतिरोध की गाथा

***अमित कुमार लोहार**

*शोधार्थी, हिन्दी विभाग, मिजोरम विश्वविद्यालय, आइजोल

Received: September 09, 2026 *Accepted: November 07, 2026*

शोध सार

'मिस रमिया' उपन्यास की लेखिका कावेरी जी है। जो भारतीय समाज के हाशिये पर पड़े वर्गों खास तौर पर निम्न जाति के लोगों के जीवन-संघर्ष को रेखांकित करती है। यह कृति केवल एक व्यक्ति की नहीं; बल्कि एक व्यापक सामाजिक विसंगति की कथा है। जो जातिगत भेदभाव संस्थागत अन्याय और उत्पीड़ित समुदायों की अस्मिता के सवाल को केंद्र में रखती है। मुख्य पात्र रमिया और श्यामली है जो आर्थिक तंगी के बावजूद शिक्षा और नैतिकता को प्राथमिकता देती है। समाज की अराजक ताकतों और जातिगत द्वेष से भरे पात्रों जैसे रतन और शंकर के खिलाफ खड़ा होती है और आगे चलकर शिक्षिका बनकर न्याय का प्रतीक बनती है। वहीं माधो चाचा और मधु दी जैसे पात्र यह दिखाते हैं कि शिक्षा के संस्थान भी जाति के आधार पर भेदभाव करते हैं। जहाँ योग्यता से अधिक सवर्णता को वरीयता दी जाती है। लेखिका की भाषा-शैली सरल खड़ी बोली के साथ-साथ मगही-भोजपुरी के आंचलिक शब्दों को भी समेटे हुए है। जो कथा को प्रामाणिकता प्रदान करती है।

बीज शब्द : दलित चेतना, स्त्री विमर्श, जातिगत भेदभाव, अछूतपन, वर्ग-संघर्ष आत्म-सम्मान, प्रतिरोध, उत्पीड़न, आर्थिक विषमता, नैतिकता, आंबेडकरी विचारधारा।

उपन्यास की शुरुआत रमिया और श्यामली के बचपन से होती है। श्यामली छोटी थी तभी स्कूल में नाम लिखाया गया था। उसके वर्ग में एक और लड़की जिसका नाम रमिया था वह भी उसी दिन आई थी।"रमिया के पहनावे से लगता था कि वह गरीब परिवार की लड़की है परन्तु उसकी सफाई एवं रूप-रंग निराले थे। पतली नाक, बड़ी-बड़ी आँखें, गोल मटोल चेहरा और चुलबुल स्वभाव वाली वह लड़की पढ़ने में तीव्र बुद्धि वाली थी।"1 इस पंक्ति में लेखिका ने रमिया के बाहरी गरीबी और आंतरिक गुणों के बीच एक सुंदर विरोधाभास पेश किया है। भले ही उसके कपड़े उसकी आर्थिक बेबसी बता रहे थे। लेकिन उसकी सफाई उसका आकर्षक रूप-रंग और चुलबुला स्वभाव उसे एक साधारण गरीब बच्ची से अलग बनाता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि वह पढ़ने में बहुत तीव्र बुद्धि वाली थी। कक्षा के मास्टर साहब रमिया और श्यामली दोनों को पास-पास बैठाते थे। पहले उनका आपस में परिचय हुआ फिर धीरे-धीरे बातचीत शुरू हुई और कुछ ही दिनों में दोनों में गाढ़ी दोस्ती हो गई। रमिया और श्यामली के घर थे तो एक ही गाँव में लेकिन टोला का अंतर था। श्यामली बाभन कायस्थ टोला की रहने वाली थी और रमिया दलित टोला की। यही जातिगत अंतर उपन्यास में आगे चलकर संघर्ष का मूल बनता है। यह स्थापित करता है कि बचपन की मासूम मित्रता भी जाति की दीवारों को नहीं तोड़ सकती। जब कि सामाजिक व्यवस्था उसे भेदना चाहती है।

एक दिन दोनों सहेलियों को प्यास लगी। वे दोनों पानी पीने के लिए स्कूल के बगान के कुएँ पर गईं। लेकिन बाल्टी नहीं थी। इधर-उधर नज़र दौड़ने पर मालूम हुआ कि बाल्टी ऑफिस के सामने है। श्यामली ने रमिया की ओर इशारा करते हुए कहा, "देखती क्या है, दौड़कर बाल्टी ला। प्यास के मारे मरी जा रही हूँ।" रमिया दौड़कर बाल्टी उठा लायी। उठाते ही एक गर्जन भरी डाँट सुनाई पड़ी, "अरे! तू कौन है? बाल्टी छू दी।" बगुली वाला डंडा को गर्दन में फंसाकर टीकाधारी मास्टर ने उसे अपनी ओर खींचा और तड़ातड़ दो झापड़ जड़ दिये।" 2 यह उस व्यवस्थागत हिंसा को दर्शाता है जहाँ एक मासूम बच्ची को उसकी जाति के कारण दंडित किया जाता है। बाल्टी छू लेने का अपराध इतना गंभीर था कि शिक्षक ने शारीरिक दंड देना उचित समझा जबकि रमिया ने कोई गलत किया ही नहीं था। वह केवल अपनी सहेली की प्यास बुझाने गई थी। उस घटना के बाद रमिया को बुखार लग गया

रमिया की पिता के मन में तरह-तरह के विचार आते हैं। वह सोचते है कि जिस समाज ने उसे छोटी सी बात पर थप्पड़ मारा, उसी समाज के लोग कितने पाखंडी हैं। वह मन-ही-मन कहते है "पाखंडी टीका चंदन लगाकर पुजारी बना है, दिल तो इनका काला है। गली-कूँची में गुजरेंगे तो साले बेटी-बहू को घूरते जायेंगे और ऊपर से टीपोरी करेंगे। और बीच में गांधी बाबा जो टपका वही हरिजन नाम देकर गलीज में धकेल दिया। सुनने में आता है के जो देश के स्वतंत्रता के लिए शहीद हुए थे, उनको अहिंसा की टोकरी से ढ़ककर अपने को त्यागी परूष बना। बीच में रमिया के कराह से ध्यान भंग हो जाता उसका।"3 लेखिका ने समाज के उस दोहरेपन पाखंड को उजागर किया है जहाँ लोग बाहर से धार्मिक और सात्विक बनते हैं परंतु उनके भीतर की मानसिकता अत्यंत दूषित और भेदभावपूर्ण होती है। टीका-चंदन और पुजारी का वेश धारण करने वाले लोग वास्तव में स्त्रियों पर अश्लील टिप्पणियाँ करने से नहीं चूकते यह उस पुरुष-प्रधान समाज का व्यंग्यात्मक चित्रण है जो बाहरी आडंबर के पीछे अपनी दूषित मानसिकता छिपाता है।

पूरे महीने भर बाद रमिया स्कूल आयी। श्यामली बहूत खुश थी अपनी सहेली को पाकर। श्यामली क्यों नहीं खुश होती। रमिया का बनाया हुआ हिसाब झट करके मास्टर जी को दिखा देती थी। समय बीतता गया स्कूल में बैजु नाम का लड़का भी था जो बहूत सज्जन था और श्यामली से खूब बनता एक समय के बाद तीनों की दोस्ती गहरी होती गई। तीनों मिल कर बैर तोड़ने चले गए ठीक पेड़ पर चड़ कर वह तोड़ कर नीचे गिराता और रमिया और श्यामली बिछती गई और बहूत जो जाने के बाद बोली बैजु उतर जा नहीं तो घर जाने में देर हो जाएगी। इतनी ही देर में बैजु धम्म से गिड़ा और बेहोस हो गया उसके बाद दोनों के प्रयास के बाद बैजु जगा और घर के लिए रवाना हो गया। बात करते-करते वे जंगल पार कर गए। गाँव के लोग रास्ते में मिलने लगे लेकिन किसी ने कुछ पूछा नहीं। अभी उन्हे शायद संशय का कोई कारण नहीं क्योंकि बैजू दूसरे रास्ते से घर जा रहा था।

समय बीतता गया। रमिया के परिवार की दशा इतनी खराब थी कि समय पर उसे कोई समान नहीं मिलता। बेचारी किसी तरह अध्ययन जारी रखती। परंतु अपनी गरीबी और परिवार की लाचारी किसी के ऊपर प्रकट नहीं होने देती। रमिया के पास फीस देने के लिए पैसे नहीं थे। एक दिन शिव स्कूल में फीस जमा कर रहा था। रमिया को देखकर उसने कहा मेरे पास 10 रुपये का नोट है तुम्हारे बदले भी दे देता हूँ। तुम्हारे पास जब होगा तो दे देना। रमिया इस प्रस्ताव को अस्वीकार नहीं कर सकी। इसके बाद जब कभी शिव रमिया को एकांत में पाता तो कहता रमिया तुम्हें जिस चीज़ की कमी हो हमसे कहना। दुःख-सुख के भागी हम लोग नहीं रहेंगे तो और कौन? बामन पंडित रहेगा? रमिया इन बातों को सुनकर मन-ही-मन उसके प्रति आकृष्ट हो जाती। एक दिन रमिया को साबुन की ज़रूरत पड़ी। उसने सोचा माँ से क्या कहूँ शिव की दुकान से ही उधार ले आऊँ रुपये बाद में सूद के साथ दे दूँगी। रमिया संकोची स्वभाव की थी फिर भी शिव के यहाँ गई। शिव की माँ ने पूछा क्यों आई हो रमिया बेटी? रमिया ने कहा साबुन लेने चाची। शिव की माँ बोली शिव, रमिया को साबुन दे दो मैं सब्जी काट रही हूँ। शिव पहले से ही तैयार था। वह समझता था कि रमिया के पास फीस देने के रुपये नहीं थे तो साबुन के लिए कहाँ से आयेंगे। साबुन हाथ में देते हुए बोला लो साबुन रुपये नहीं हैं तो कोई बात नहीं। रमिया जैसे ही मुड़ी कि शिव ने पीछे से उसे गोद में उठा लिया। रमिया बोली जल्दी छोड़ो शिव नहीं तो चिल्ला पड़ूंगी। शिव ने छोड़ दिया। रमिया ने साबुन फेंकते हुए नागिन की तरह फुँफकार उठी क्या यही तुम्हारा उपकार है? लाचारी के ऊपर व्यभिचार करते तुम्हें शर्म नहीं आई? अब से मेरी ओर नज़र उठाई तो आँख फोड़ डालूँगी। मैं कल तक तुम्हारे रुपये वापस कर दूँगी और वह बिना साबुन लिए ही चली गई। कहने को तो कह आई लेकिन रास्ते भर रुपये उसके दिमाग में नाचते रहे। घर आकर एकांत में उसने अपनी गरीबी पर खूब आँसू बहाए। वह पुनपुन निगोड़ी पर बहुत गुस्सा हुई यह गरीबी ही नहीं सताती तो आज ऐसा नहीं भोगना पड़ता। जब जी भर कर रो ली तो आँचल से पोंछते हुए अपने आप से बोली रोने से काम नहीं चलेगा। इस कमी को दूर करने के लिए कुछ करना चाहिए। लेकिन इतनी जल्दी क्या काम करूँ कि समस्या हल हो? पाँच का हरा नोट उसकी आँखों के सामने नाचने लगा। उसने माँ से कहा माँ किसी से पैंचा लेकर मुझे 5 रुपये दो स्कूल में फीस जमा करनी है। सुबह ही पिताजी पांच का हरा नोट देते हुए बोले, " बेटा सबके रखवाले ऊपर वाले हैं। मैंने जो पवित्र मन से अपने बेटा को पढ़ने का व्रत ठाना है उसे वही पूरा करेंगे।"रमिया अपराधिन जैसे नोट लेते हुए सोचने लगी, 'इसके लिए पिताजी को कितने दरवाजे देखने पड़े होंगे।' परंतु मुंह से कुछ नहीं बोली। नोट लिए गरवीले रूप से शिव के यहाँ गई। शिव पर नोट फेंकते हुए बोली, "किसी गरीब का इज्जत पांच रूपये के बराबर मत समझना ?" 4 इस पंक्ति के माध्यम से लेखिका रमिया की गरीबी और विवशता को दिखाती है। जहाँ शिव दिखावटी सहयोग के बहाने उसके साथ दुर्व्यवहार करने का प्रयास करता है लेकिन रमिया अपने आत्म-सम्मान की रक्षा करते हुए उसे तीखा जवाब देती है और अंततः पाँच रुपये चुकाकर अपनी इज्जत को पैसों से बड़ा साबित करती है। यह घटना रमिया के दृढ़ चरित्र संघर्षशीलता और आत्म-सम्मान को रेखांकित करती है। शिव डर के मारे उसकी ओर देख भी नहीं सका। रमिया में एक ओज है। गरीब होते भी उसमें किसी तरह का छिछोरपन नहीं है। आज तक शिव एक गज रिबन पर ही बड़े घर की कितनी लड़कियों को चूमा था। परंतु रमिया तो उसकी नजर में अजीब ही निकली।

गर्मी की छुट्टियाँ समाप्त होने के बाद आषाढ़ माह का आगमन होता है। जब प्यासी धरती वर्षा से तृप्त होकर सोंधी- सोंधी डकारें उगल रही होती है। इसी मौसमी परिवेश में श्यामली और रमिया स्कूल जा रही थीं लेकिन रास्ते में उन्हें एक नए संघर्ष का सामना करना पड़ता है। रतन और उसके

साथी जलपान कर रहे थे तभी बैजू वहाँ से गुजरा। रतन ने तुरंत उसे देख लिया और जातिगत द्वेष से भरकर गाली दी कहरा साला चमार का बेटा, रास्ता चलता है तो एकदम अंधा बनकर ही। उसको दिन में भी दिनौंधी हुआ है। रतन को इस बात का भी अहंकार चुभ गया कि बैजू ने बिना झुके सटकर उनके पास से निकल गया। वह चाहता था कि एक निम्न जाति का व्यक्ति उसके सामने नम्रता दिखाए पर बैजू ने अपनी स्वाभिमानी चाल नहीं छोड़ी। यह देख रतन और भड़क उठा और उसने बैजू को सबक सिखाने की ठान ली।

इसी भीड़ में एतवार ने बैजू को थप्पड़ मारते हुए 'हरामी' कहा। मार खाकर भी बैजू में आत्म-सम्मान की चिंगारी बाकी थी। वह बिफरकर उठा और बोला देखो चाचा, मारा, मैं मार खा लिया लेकिन अब हरामी मत बोलना। हरामी का अर्थ क्या होता है। जिन्दगी भर हल चलाने वाला। इस संघर्ष ने बैजू के अंदर की वर्ग-चेतना को जगा दिया। परन्तु इसके बाद उसने जो कहा, वह उसके प्रतिरोध की सबसे बड़ी छलांग थी। जाते-जाते उसने पलटकर कहा हाँ-हाँ मैं हरामी नहीं हूँ। अगर आप लोग हरामी का नाम जानेंगे तो उसकी पूजा करना छोड़ देंगे। हरामी तो राम, कृष्ण और पाण्डव लोग थे जिन्हें अपने आप का पता नहीं। इस क्रांतिकारी कथन के माध्यम से बैजू ने केवल अपने अपमान का जवाब नहीं दिया बल्कि मध्यकाल और रीतिकाल से चली आ रही उस धार्मिक-सामाजिक व्यवस्था को चुनौती दी जो सदियों से जाति-भेद को पवित्रता का प्रतीक मानती आई है। उसने स्थापित मान्यताओं पर सवाल उठाकर यह सिद्ध किया कि धार्मिक औचित्य के नाम पर जो अन्याय किया गया। वह झूठा और पक्षपातपूर्ण है।

इस पूरे दृश्य के बाद हलवाहे बैजू की बातों से सहमत तो थे परंतु मालिक के भय और सामाजिक बंधनों के कारण वे मौन रहे। वे कुछ सही तो कुछ गलत अर्थ मन में लगाते रहे पर खुलकर कुछ नहीं बोल पाए। यह पंक्ति उस सामाजिक दबाव को रेखांकित करती है जहाँ हाशिए का व्यक्ति सच्चाई जानते हुए भी विरोध करने में असमर्थ होता है और अपनी विवशता को सहन करने को विवश हो जाता है।

भीड़ के छँटने के बाद बैजू की नज़र जब श्यामली पर पड़ी तो वह शर्मा गया परंतु श्यामली ने उसका साहस बढ़ाते हुए उसके विचारों को सही ठहराया। उसने बैजू से कहा कि जो लोग उसे 'हरामी' कह रहे थे। वे अंग्रेजों के दादा-परदादा से कम नहीं हैं क्योंकि जिस प्रकार अंग्रेज भारतीयों को 'Black Dog' (काला कुत्ता) कहकर दुत्कारते थे। उसी प्रकार ये लोग जाति के आधार पर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करते हैं। श्यामली ने इस सामाजिक विडंबना पर गहरी चोट करते हुए कहा कि जहाँ विदेशी देश अंतरिक्ष में घर बसाने की बात कर रहे हैं वहीं भारत में लोग आज भी जाति की सड़ी दुर्गंध में दम तोड़ रहे हैं। उसने प्रश्न किया कि जब सृष्टि के रचयिता ने ही जाति-भेद नहीं बनाया तो फिर ये लोग यह भेद क्यों पालते हैं और क्या यह उनका स्वार्थ और छिछोरापन नहीं है? श्यामली ने आगे कहा कि ऊँचा बनने की इस अभिलाषा से क्या कोई हिमालय बन जाता है अंततः तो शरीर को पाँच तत्वों में मिल जाना है। उसने बैजू को अपना मानवतावादी दृष्टिकोण बताते हुए कहा कि वह किसी जाति या धर्म से प्रेम नहीं करती बल्कि केवल मानव से प्रेम करती है।

श्यामली ने सामाजिक संरचना पर प्रहार करते हुए यह भी कहा कि देश में जो सांप्रदायिक दंगे और दरारें हैं उनके लिए जिम्मेदार अनपढ़ नहीं, बल्कि पढ़े-लिखे लोग हैं और यह जातीय दुर्गंध घर, सड़क, रेलवे से लेकर मंत्रियों की कुर्सी तक पहुँच चुकी है। उसने बच्चों के भविष्य की चिंता करते हुए कहा कि यदि बच्चों के कोरे दिमाग में जाति के गंदे अक्षर भर दिए जाएँ तो इस पीढ़ी का कल्याण कभी नहीं हो सकता। इस अंश के माध्यम से लेखिका ने समाज के उस दोहरे चरित्र को उजागर किया है। जहाँ एक तरफ श्यामली जैसी मानवतावादी सोच है जो जाति-व्यवस्था को ध्वस्त करने की बात करती है और दूसरी तरफ बैजू की निराशावादी यथार्थवादी आलोचना है जो इस बात से अवगत है कि समाज किसी भी सुधारवादी बात को आसानी से स्वीकार नहीं करता और उसे अनदेखा कर देता है। यह संवाद उपन्यास की केंद्रीय विचारधारा को प्रकट करता है कि जाति का प्रश्न केवल व्यवहार तक सीमित नहीं है बल्कि विचारों और साहित्य के स्तर पर भी एक गहरा संघर्ष है।

कहानी अब एक नए मोड़ पर आ जाती है। जहाँ कथा के अंदर एक और उलझन जन्म लेती है। श्यामली की माँ का देहांत हो जाता है और उसके सिर पर पूरे घर का बोझ आ जाता है। उस पर जो आफत गिरी है वह वही जानती है। एक ओर अपनी निजी व्यथा तो दूसरी ओर घर-गृहस्थी की जिम्मेदारी। इसी भँवर में उसके विवाह की बातें चलने लगती हैं जैसे समाज उसके दुःख को भी अपनी परंपराओं में बाँधना चाहता है। श्यामली की उलझन यह है कि वह बैजू से प्रेम करती है परंतु सामाजिक बंधन, जाति की दीवारें और अब पारिवारिक दायित्व उसे एक ऐसी राह पर धकेल रहे हैं। जहाँ उसकी अपनी इच्छाएँ दबकर रह जाती हैं। दूसरी ओर रमिया का संकल्प दृढ़ है वह विवाह नहीं करना चाहती। वह कहती है कि वह अपना सारा जीवन देश की सेवा में लगा देना चाहती है। खासकर नन्हे-नन्हे गरीब बच्चों के विकास में उसकी सोच है कि इन बच्चों को शिक्षा और संस्कार देकर ही वह अपने जीवन को सार्थक कर सकती है। रमिया का यह आदर्श उसे पारंपरिक रीति-रिवाजों से अलग खड़ा करता है और उसे एक आधुनिक, स्वावलंबी व समाज-सेविका के रूप में प्रस्तुत करता है। जो व्यक्तिगत सुख की अपेक्षा सामूहिक कल्याण को प्राथमिकता देती है। इस प्रकार इन दोनों

पात्रों के जीवन में समानांतर संघर्ष चल रहे हैं। एक पारिवारिक बंधनों में जकड़ी जा रही है तो दूसरी सामाजिक सेवा के माध्यम से स्वयं को मुक्त करने का मार्ग चुन रही है।

एक दिन की बात है रमिया बच्चों को पढ़ा रही थी। तभी माधो चाचा माथे का पसीना पोंछते हुए आए और बोले रमी बेटी सुना है कि तुम बच्चों को बहुत अच्छी तरह पढ़ा रही हो। अभी कुल संख्या कितनी है? रमिया ने बताया चाचा अभी सौ के करीब है। आज शनिवार है इसलिए बच्चे कम आए हैं। माधो चाचा ने कहा अरे सौ बच्चे हैं! तुम बहुत दिन से इतना परिश्रम कर रही थीं। तुम्हें परिश्रम का फल दूंगा परंतु फिर वे गंभीर होते हुए बोले सरकार से स्वीकृति कराने के लिए बहुत परिश्रम करना पड़ेगा और इसमें शिक्षकों की संख्या भी और होनी चाहिए। सोमवार से मधु भी बच्चों को संभालेगी। रमिया ने आश्चर्य से पूछा चाचा जी मधु क्या पढ़ना जानती है? माधो चाचा हँसते हुए बोले अरे पगली तुम नहीं जानती वह प्रवेशिका पास है। घर पर ही उसके पिता ने पढ़ना-लिखना सिखा दिया था और प्रवेशिका की परीक्षा दिलवा दी। रमिया कुछ नहीं बोली क्योंकि गाँव के बड़े लोगों के सामने वह क्या बोलती उसने स्वीकृति में सिर हिला दिया। सोमवार को छः बजे ही मधु सज-धज कर हाथ में बैग हिलाती हुई पहुँची। उसे देखकर लग रहा था जैसे कोई कॉलेज की अध्यापिका आई हो। रमिया उसे पहचानती तो थी परंतु मधु ने शायद रमिया को कभी देखा भी न था। रमिया मन में सोच रही थी। यही मधु है जिसे हमेशा ऊँची जाति का अहम् भरा रहता है। मनुष्यों को अछूत कहकर उनसे घृणा करना सिखाया गया है। मधु इधर भूलकर भी अपना चेहरा नहीं लाई थी। वही अब घंटों इधर रहकर कैसे इन अछूत फूलों को छूएगी कैसे इन लोगों में इतना बदलाव आ गया। रमी यही सब मन में कल्पना कर रही है। रमिया के इस आंतरिक संवाद में भारतीय समाज की वह विडंबना उघड़कर आती है। जहाँ औपचारिक योग्यता और जन्मगत अहंकार को नैतिक श्रेष्ठता पर वरीयता दे दी जाती है। रमिया के लिए शिक्षा का अर्थ केवल प्रवेशिका पास करना नहीं बल्कि जीवन-यथार्थ को समझना और उसके प्रति संवेदनशील होना है। वह जानती है कि मधु के कथित ज्ञान के पीछे जातिगत पाखंड की वही सड़ी दुर्गंध है जिससे उसका पूरा समाज अब तक ग्रस्त रहा है। मधु का यहाँ 'अध्यापिका' बनकर आना रमिया के लिए एक व्यंग्य से कम नहीं जिस समाज ने रमिया को बाल्टी छूने पर बचपन में झापड़ मारे थे। वही समाज अब मधु को पुष्प-माला पहनाकर उसी अछूत बस्ती का शिक्षक बना रहा है पर यहाँ रमिया की व्यथा यह है कि बच्चे जो उसके स्पर्श और प्यार पर पलते थे अब मधु की दूरी और घृणा से सिकुड़ जाएँगे उनके नन्हे-नन्हे मन में यह सवाल जन्म लेगा कि आखिर उन्हें क्यों अछूत माना जाता है? इस प्रकार, रमिया की यह कल्पना मात्र एक व्यक्ति की सोच नहीं, बल्कि संपूर्ण दलित चेतना की वह आवाज है। जो सवर्णवादी ढोंग के विरुद्ध अपनी अस्मिता और मर्यादा को बनाए रखने का प्रयास कर रही है।

गर्मी का दिन था। रमिया प्रतिदिन 6:30 बजे से पढ़ाना शुरू करती थी परंतु बच्चे छः बजे ही आ जाते थे। झाड़ू-बुहारी में आधा घंटा लग जाता था। जब बच्चों ने झाड़ू लगा ली तो रमिया ने खटोला बिछाते हुए कहा बैठिए मधु दीदी। मधु ने ऐंठकर कहा क्या तुम इसी पर बैठकर पढ़ाती हो? ना बाबा ना मुझसे इस पर नहीं बैठा जा सकता। कितनी देर उकड़ू बैठे रहेंगे? कल से कुर्सी का प्रबंध होना चाहिए। रमी तुमने किसी चीज़ का प्रबंध नहीं किया। कम से कम एक श्यामपट्ट और कुर्सी-टेबुल तो होना चाहिए। मधु की यह माँग उसके उस जीवन-दर्शन को प्रकट करती है जो सुविधा प्रदर्शन और बाहरी आडंबरों पर टिका है। वह शिक्षा को ज्ञान-प्राप्ति का माध्यम नहीं बल्कि सामाजिक प्रतिष्ठा का प्रतीक मानती है। इसके विपरीत रमिया का सरल खटोला जो कि सचमुच इस धरती का हिस्सा है। जहाँ गरीब बच्चे बिना किसी दिखावे के ज्ञान की भूख बुझाते हैं रमिया की सादगी और समावेशी मानसिकता का प्रतीक है। रमिया ने सहज पर करुणापूर्ण स्वर में कहा पर ये सब कहाँ से आयेंगे मधु दीदी? मधु ने पूछा क्या चंदा करके नहीं हो सकता? रमिया ने उत्तर दिया नहीं हो सकता, जो बाप-बच्चों को भरपेट अन्न नहीं दे पाता वह चंदा कहाँ से देगा? यह उत्तर मधु के उस अमूर्त 'बाजारवादी' तर्क को चुनौती देता है। जो यह मान बैठा है कि वस्तुएँ और सुविधाएँ कहीं से आ जाती हैं। रमिया उसे यथार्थ से रूबरू कराती है। यहाँ तो अस्तित्व की बुनियादी लड़ाई चल रही है ऊपरी सुविधाओं की नहीं। मधु ने तीखा व्यंग्य किया तो क्या मुफ्त ही अभी तक पढ़ाती थी? इस पर रमिया ने जो कहा वह उसके चरित्र की आधारशिला है गरीबी क्या है मैं जानती हूँ। फिर इनसे पढ़ाई के बदले क्या लेती? केवल उनकी खुशी से खुश रहती हूँ। इस वाक्य में समस्त उपभोक्तावादी, पूँजीवादी तर्क चूर-चूर हो जाते हैं। यह शिक्षा को एक वस्तु न मानकर एक मानवीय रिश्ते के रूप में स्थापित करता है। इस आत्मीयता और अपार त्याग पर मधु की प्रतिक्रिया जातिगत द्वेष की ज्वाला में भड़क उठती है। वह कहती है "तो हमसे ऐसा नहीं होगा। एक तो हल चलाने वाले और नीच कर्म करने वालों को पढ़ाकर मूर्ख बनना, दूसरा मुफ्त! आज ये पढ़ जाएँगे तो कल हमारी बराबरी करने लगेंगे, हमारे बच्चों की तरह खाना-पहनना खोजेंगे।" 5 कहकर उसने नाक सिकोड़ी, मानो अछूत का गंध उसके नाक में छेद कर देगा। मधु के इस कथन में भारतीय जाति-व्यवस्था का पूरा मनोविज्ञान उजागर होता है। शिक्षा को जाति-बाधित रखने का डर 'अपनी' श्रेष्ठता को खोने का आतंक और सामाजिक गतिशीलता के प्रति वह दुर्गंध-भरा पूर्वाग्रह जो सवर्ण मानसिकता को परिभाषित करता है। मधु के लिए शिक्षा समता का हथियार नहीं बल्कि प्रभुत्व बनाए रखने का एक कवच है। इस संकीर्णता पर रमिया आघात करती है। मधु दीदी आप ये क्या बोलती हैं? अब देश आजाद है और यहाँ के लोग एक समान हैं। सब

देश के नागरिक हैं। सबके समान अधिकार हैं फिर इसमें तुलना कैसी?" रमिया यहाँ संविधान और मौलिक अधिकारों की उस मौलिक भावना को सामने लाती है। जो जाति-भेद को असंवैधानिक और अमानवीय घोषित करती है। परंतु मधु सदियों के सांस्कृतिक अहंकार से तैयार है। वह पलटकर कहती है "नहीं रमी, जो आज तक पैर के नीचे रहा, वह सिर के बराबर कैसे होगा?"6 यह वाक्य समूचे सवर्णवादी दर्शन का सार है। यह विश्वास कि ऐतिहासिक उत्पीड़न एक 'प्राकृतिक व्यवस्था' है। जिसे चुनौती नहीं दी जा सकती। इसके जवाब में रमिया के पास जो तैयारी है। वह केवल करुणा नहीं, अपितु एक पूरी सामाजिक-ऐतिहासिक समझ है जो अब रूप लेने वाली है। रमिया ने मधु को ऐतिहासिक दृष्टि से समझाया कि जाति-भेद मानव-निर्मित स्वार्थ है। जो श्रम-विभाजन से विकृत होकर जन्मगत श्रेष्ठता-निम्नता में बदल गया। उसने अंग्रेजों द्वारा भारतीयों को 'इंडियन डॉग' कहने के उपनिवेशवादी अपमान, भारत के विभाजन की त्रासदी और डॉ. अम्बेडकर द्वारा देश को तीसरे विभाजन से बचाने के ऐतिहासिक योगदान का हवाला देते हुए बताया कि यदि अम्बेडकर अपने पथ से डिग जाते तो भारत माँ का केवल मध्य भाग (चेहरा) ही बचता और दोनों भुजाएँ अलग हो जातीं। परंतु मधु ने इस सारे तार्किक प्रहार को 'मुझे समझ नहीं आता' कहकर नकार दिया और 'हम तुमसे ऊँची जाति' की संकीर्ण मानसिकता पर अड़ी रही। रमिया ने शांत स्वर में कहा कि आत्माएँ कभी नीची नहीं होतीं। भले ही लोग अपने मनमाने टीका-चंदन का दंभ पालें। मधु के भीतर गहरा झटका लगा और वह सोचने लगी कि रमिया इतना जानती है केवल शिक्षा के कारण अच्छा होता इन्हें शिक्षा न दी जाती क्योंकि यह ज्ञान उसके जातिगत वर्चस्व के लिए खतरा है।

इसी बीच माधो चाचा वहाँ आए और मधु से स्कूल के बारे में पूछा। मधु ने व्यवस्था को तुच्छ ठहराया तो चाचा ने 'सब इंतजाम' का आश्वासन दिया। उन्होंने रमिया से खाता माँगा तो रमिया ने बताया कि उसके पास सिर्फ हाजिरी बही है। इस पर चाचा ने स्वीकृति जल्दी मिलने के लिए स्कूल को एक साल की जगह चार साल पुराना दिखाने का झूठा सुझाव दिया। यह घटना संस्थागत भ्रष्टाचार और सत्ता-तंत्र के स्वार्थपूर्ण खेल को उजागर करती है। जो रमिया की ईमानदारी के बिल्कुल विपरीत है। चाचा के पटना जाने के बाद जो बच्चे कभी रमिया के इशारे पर दौड़ पड़ते थे। वे मधु के तिरस्कारपूर्ण व्यवहार को देखकर सहमकर सिकुड़ गए। रमिया को गहरा दुःख हुआ कि आज एक अक्षर भी पढ़ा नहीं पाई और पूरा दिन बर्बाद हो गया। अंत में जब रमिया ने घड़ी के अभाव में धूप की छाया देखकर समय बताया तो मधु ने उसकी गरीबी और सादगी पर उपहासात्मक हँसी उड़ाई जो न केवल उसकी संवेदनहीनता को बल्कि रमिया की प्रकृति-सम्मत जीवन-शैली और मधु की कृत्रिम, उपभोक्तावादी मानसिकता के बीच की खाई को भी रेखांकित करती है।

कुछ दिनों बाद माधो चाचा पाँच-छह मोटे-मोटे रजिस्टर लेकर आए। इन रजिस्टरों में चार साल आगे का पूरा रिकॉर् - हाजिरी, पाठ्यक्रम, मूल्यांकन, सब कुछ झूठ-मूठ का भरा हुआ था। मधु को प्रधानाध्यापिका दिखाया गया और रमिया से एक कागज़ पर लिखवाया गया मैं चार साल से इनके अंडर में काम कर रही हूँ। रमिया बेचारी विवश थी जैसे-जैसे चाचा कहते गए वह लिखती गई। उसे पता था कि यह झूठ है कि उसने वर्षों तक बिना किसी पहचान बिना किसी पैसे के इन बच्चों को पढ़ाया था। परंतु अब सत्ता-तंत्र की इस चालाकी के आगे उसकी ईमानदारी और त्याग को कुचल दिया गया। चाचा ने जाते-जाते कहा-जल्द ही तुम्हारे स्कूल को मैं आगे बढ़ाऊंगा मानो यह सब उनकी दया-दृष्टि का फल हो न कि रमिया के वर्षों के संघर्ष का। इस कृत्य ने संस्थागत भ्रष्टाचार और सवर्ण-वर्चस्व के मिल-जुलकर किस प्रकार किसी गरीब, प्रतिभाशाली शिक्षिका की नैतिकता को रौंदकर एक झूठी दिखावटी व्यवस्था को स्थापित करते हैं।

छुट्टी के बाद रमिया घर लौटी और चुपचाप सोचने लगी। क्या दुनिया है इतने दिनों से मैं काम कर रही थी और चाचा ने मधु को प्रधान बना दिया। यह वाक्य रमिया के मन के उस गहरे आघात को प्रकट करता है। जो ईमानदारी से किए गए परिश्रम का मज़ाक बनते देख पैदा होता है। यह अकेलेपन और विश्वासघात का क्षण है। जहाँ उसे लगता है कि उसके अपने ही (माधो चाचा) ने उसे धोखा दिया क्योंकि उसने मधु को जो केवल जाति और दिखावे के बल पर ऊँची कुर्सी पर बैठी थी। रमिया की मेहनत का फल चाचा ने मधु को दे दिया।

इस घटना के बाद स्कूल का पूरा माहौल बदल गया। मधु के प्रधानाध्यापिका बनने के बाद उसका जातिगत अहंकार और भी बढ़ गया। मधु दी किस तरह बैग लटकाये हाथ में रुमाल लिए अपना रौब बच्चों पर जमाती है। एक दिन लल्लू को कैसे थप्पड़ खींच कर जमायी थी। सिर्फ इसलिए कि गिनती लिखते समय उनकी साड़ी से छू गया था। उसमें उसे बेचारे की क्या गलती ? झाड़ते -झाड़ते दो चार भद्दी गाली भी दी थी। उस समय रमी आप से बाहर हो गई थी। वह कड़क उठी, "मधु दी, आप ऐसे बात नहीं कह सकती।" इस पर मधु दी बोली ,"रमी ,तुम हमको आँख दिखायेगी। आखिर मैं कितना भी हूँ तुमसे जाति की ऊँची हूँ। इस नीच गधे को मारूं नहीं तो और क्या? सब कुत्ते गंगा नहायेंगे तो बर्तन कौन ढुनढुनायेगा। ये लोग पढ़-लिखकर क्या करेंगे।" 7 मधु के इस वाक्य में जातिगत द्वेष अपने सबसे क्रूर अमानवीय रूप में सामने आता है। वह दलितों को 'गधा' और 'कुत्ता' कहती है, और यह घोषित करती है कि उनका काम केवल दूसरों के यहाँ बर्तन धोना है। यह कोई आकस्मिक गाली नहीं है बल्कि वही मनुस्मृति-जनित

विचारधारा है। जो हजारों वर्षों से कुछ मानवों को 'नीच' और 'अस्पर्शी' घोषित करके उन्हें जन्मगत दासता में जकड़े रखना चाहती है। मधु के लिए शिक्षा एक खतरा है क्योंकि अगर ये 'नीच' लोग पढ़-लिख गए तो उन्हें कोई बर्तन धोने को नहीं मिलेगा यानी उनकी सामाजिक-आर्थिक गुलामी की जंजीर टूट जाएगी। परंतु इस अमानवीय तिरस्कार के सामने रमिया का उत्तर न केवल साहसिक है, बल्कि दार्शनिक और वैज्ञानिक है। वह कहती है- "मधु दी, मैं फिर एक बार कह रही हूँ, ऐसी बात नहीं बोलिए। ये लोग पढ़-लिख कर भी कुछ नहीं करेगा तो क्या ऊँची जाति के बच्चे माँ के पेट से ही कुछ करके निकलता है? सब कोई अभिमन्यू ही जन्म लेता है? यह क्या जरूरी है कि एक डॉक्टर को बेटा डॉक्टर और एक पंडित का लड़का पंडित और एक विद्वान का लड़का विद्वान होगा।" रमिया यहाँ जन्मगत प्रतिभा के सारे हिंदू-पौराणिक दावों को ध्वस्त करती है। वह कहती है कि अगर अभिमन्यु जैसा योद्धा (जो गर्भ में ही चक्रव्यूह भेदना सीख गया था) एक अपवाद है। तो उसे सामान्य नियम नहीं माना जा सकता। इसी प्रकार किसी डॉक्टर का बेटा डॉक्टर नहीं बन सकता। किसी पंडित का बेटा पंडित नहीं बन सकता है। तो फिर क्यों एक जूता बनाने वाले का बेटा जूता ही बनाए? यह रमिया का उस 'जन्म-जाति-कर्म' के सिद्धांत पर किया गया सबसे तीक्ष्ण बौद्धिक प्रहार है। जो सदियों से दलितों को उनके पूर्वजों के 'नीच' कर्मों में कैद रखता आया है।

इसके बाद रमिया ने अपना सबसे महत्वपूर्ण दार्शनिक उपमान प्रस्तुत किया- "मैं यह मान सकती हूँ कि परिस्थितिवश भले ही कोई दब जाता है लेकिन क्या उसकी बुद्धि में कीड़े लगे रहते है? नहीं! एक चिनगारी दूसरी चिनगारी से दबकर भले अपना जोश खोये रहती है परन्तु उसमें तीव्रता उतनी ही रहती है जितना ऊपर की चिनगारी में अगर उसे हवा की सांस मिल जाए तो वह भी अपनी बुद्धि शक्ति दिखा सकती है।" यह 'चिनगारी' (चिंगारी) का अद्भुत रूपक दलित-चेतना का सबसे सशक्त घोषणापत्र है। रमिया कहती है कि प्रतिभा, बुद्धि और क्षमता का कोई जन्मगत पदानुक्रम नहीं होता। ऊपर की चिनगारी (सवर्ण) को केवल इसलिए ज्यादा जलती हुई दिखती है क्योंकि उसे 'हवा की सांस' यानी अवसर, शिक्षा, संसाधन, और सामाजिक सहारा मिला है। नीचे दबी चिनगारी (दलित) में भी उतनी ही तीव्रता मौजूद है। बस उसे वह हवा नहीं मिली। अगर उसे एक बार शिक्षा, समानता और अवसर का 'झोंका' मिल जाए तो वह भी अपनी पूरी बुद्धि-शक्ति से चमक सकती है। यही वह आधुनिक, वैज्ञानिक और अम्बेडकरी दृष्टि है। जो यह सिद्ध करती है कि जाति-भेद निर्मित है जन्मजात नहीं। रमिया इस 'हवा' के माध्यम से संभावनाओं के समान वितरण की माँग करती है। जो भारतीय संविधान और मानवाधिकारों की आत्मा है। इस प्रकार रमिया का यह 'चिनगारी' वाला रूपक मधु की सारी तार्किक-अतार्किक घृणा को चूर-चूर कर देता है और यह सिद्ध करता है कि सच्चा ज्ञान और बुद्धि जाति-पाँति से नहीं बल्कि अवसर और वातावरण से पनपती है। यह दलित नारी की आवाज़ है जो न केवल अपने लिए बल्कि अपनी पूरी जाति एवं समाज और मानवता के लिए सम्मान, समानता और न्याय की माँग करती है।

रमिया अच्छे से जानती है कि बिना ऊंची शिक्षा लिए कोई आगे नहीं बढ़ सकता। इस लिए दोनों सहेली ऊंची शिक्षा प्राप्त करने के लिए आगे बड़ती हैं। आज दोनों सहेली खुश हैं। गया शिखिक - प्रशिक्षण महाविधालय में नामांकन हो गया है। नयी जगह, नया माहौल, नया नियम, नया लोग और उनका अपना ढंग। सीनियर लड़कियाँ एस.सी./एस.टी. (अनुसूचित जाति/जनजाति) की छात्राओं को खोज रही थीं। पाँच लड़कियाँ तो थीं, परंतु उनके रंग-रूप और रहन-सहन से पता नहीं चल पा रहा था कि वे किस जाति की हैं। यानी वे इतनी आत्मविश्वास और सक्षम थीं कि उनकी जाति का अनुमान लगाना कठिन हो गया था। यह विडंबना ही है कि समाज जाति जानने के लिए रंग-रूप और रहन-सहन को मापदंड बनाता है और जब कोई इन मानकों से बाहर हो जाता है तो वह असहज हो जाता है। लेकिन रमिया का पता कैसे चला, यह रहस्य है। शायद उसकी प्रतिभा और उसके दलित होने की खबर कहीं से लीक हो गई। एक सीनियर ने श्यामली (शमी) को एकांत में ले जाकर खूब डाँटा "तुम अपने साथ एक एस.सी. लड़की को सुलाती हो?" 8 (पेज 89) यह प्रश्न अपने आप में एक आरोप है जैसे रमिया का केवल 'एस.सी.' होना ही उसे 'अस्पृश्य' बना देता है और उसके साथ रहना एक अपराध है। यह भेदभाव हॉस्टल जैसी शिक्षा-संस्था में भी मौजूद है। जहाँ ज्ञान-प्राप्ति के बजाय जाति की दीवारें खड़ी कर दी जाती हैं।

श्यामली हॉस्टल में किसी से बात नहीं करती थी। वह शांत और एकाकी थी क्योंकि उसे समझ था कि इस जातिगत द्वेष-भरी दुनिया में खुलकर बोलना खतरे से खाली नहीं। परंतु रमिया जो एक होनहार प्रतिभा-पूर्ण और तीव्रबुद्धि लड़की थी। उसके साथ इस प्रकार का व्यवहार देखकर श्यामली के मन में गहरा क्रोध पैदा होता है। वह सोचती है आखिर भारत की दशा क्या होगी? आजादी मिली है किसको मिली? भारत के वीरों ने अपनी कुर्बानी दी किसके लिए? हँसते-हँसते फाँसी को गले में लगाया किसके लिए?' श्यामली का यह आत्म-संवाद आजादी के सपने और उसके बाद के यथार्थ के बीच की खाई को उघाड़ता है। वह कहती है कि आजादी सिर्फ 'चन्द चाटुकारों और सत्ता-सुखी ताकतवर वर्ग के लिए आई। जिन्हें केवल अपनी कुर्सी बचानी है। जबकि देश के सामान्य नागरिक खासकर गरीब, दलित, और स्त्रियाँ अभी भी असहाय और लाचार हैं। आजादी ने उनकी जंजीरें नहीं काटी बल्कि उन्हें एक नए रूप में जाति, वर्ग, लिंग के नाम पर जकड़े रखा है।

मिस रमिया ने सोचा था कि अवकाश प्राप्ति के बाद वह गाँव जाकर स्थिर होगी और वहाँ के गरीबों की सेवा में अपना जीवन व्यतीत करेगी। परंतु अब उसकी नज़र में पूरा देश ही गरीब और लाचार दिखता है। उसे लगता है कि केवल उसका गाँव ही नहीं बल्कि पूरा देश इस असमानता और शोषण की आग में जल रहा है। खासकर नारियों की समस्या अब भी समाज में जटिल बनी हुई है। यहाँ स्त्री-विमर्श उसके जातिगत चेतना के साथ मिलकर एक व्यापक मानवतावादी दृष्टि बन जाता है। वह कहती है कि डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने मानववाद का जो नारा दिया था। उसे बुलंद रखते हुए वह पूरे देश की सेवा करेगी। उसकी सोच अब संकीर्ण गाँव-स्तर से निकलकर राष्ट्रीय स्तर पर पहुँच गई है। वह अम्बेडकर की उसी मानवमात्र के कल्याण की विचारधारा को अपना लक्ष्य बनाती है। जो जाति, धर्म, लिंग से परे है।

मिस रमिया ने आगे कहा "बाबा साहब जिस समय पैदा हुए थे, समाज में चारों तरफ कीचड़ भरा था जाति-पाति का कीचड़। उससे निकलने में बाबा साहब को काफी कठिनाई हुई ,फिर भी वे हिम्मत नहीं हारे।" 9 इस वाक्य के माध्यम से रमिया अम्बेडकर के जीवन-संघर्ष को अपने स्वयं के संघर्ष से जोड़ती है। जिस प्रकार अम्बेडकर को हर कदम पर 'अछूत' होने का दंश झेलना पड़ा फिर भी उन्होंने अपनी पढ़ाई अपने संकल्प और अपने आत्म-सम्मान को नहीं गिरने दिया। उन्होंने कड़ी मेहनत करके भारत का संविधान लिखा, जो आज भी इस देश का सबसे बड़ा धर्मग्रंथ है। परंतु रमिया व्यंग्य करती है कि 'पोंगापंथी' (पाखंडी, जाति-अंध लोग) आज भी उस संविधान को झुठलाना चाह रहे हैं। लेकिन उसका उत्तर है "किसी के ढंकने से सूरज नहीं ढंकता।" यानी अम्बेडकर का महत्व, उनके विचार और संविधान की भावना इतनी प्रखर है कि उसे कोई छिपा नहीं सकता। आज बाबा साहब की पूजा देश-विदेश में हो रही है। यह उस 'सूरज' का प्रमाण है जो जाति-अंधता के कोहरे में भी अपनी रोशनी बिखेर रहा है।

अपने संबोधन के अंत में रमिया बच्चों से कहती है "आप लोग भी कड़ी मेहनत से पढ़ाई करें और बाबा साहब की तरह विद्वान बनें।" यह वही 'चिनगारी' वाला सिद्धांत है हर बच्चे में, चाहे वह किसी भी जाति या वर्ग का हो, अम्बेडकर बनने की क्षमता है, बशर्ते उसे 'हवा की सांस' अवसर, शिक्षा और समानता मिले। रमिया का यह अंतिम संदेश उपन्यास का सबसे सशक्त, आशापूर्ण और क्रांतिकारी संकल्प है। यह दलित-नारी की उस चेतना का विस्तार है, जो व्यक्तिगत पीड़ा को सामूहिक मुक्ति के आंदोलन में बदल देती है और अम्बेडकर के 'शिक्षित, संगठित, संघर्ष' के नारे को आत्मसात करती हुई, एक नई पीढ़ी को संविधान, समानता और मानवता का पाठ पढ़ाती है।

'मिस रमिया' कावेरी का वह उपन्यास है जो भारतीय समाज की जटिल जातिगत संरचना स्त्री-विमर्श और गरीबी की विडंबना को मार्मिक ढंग से उकेरता है। उपन्यास के केंद्र में रमिया, श्यामली, बैजू, मधु और रतन जैसे पात्र हैं। जो अपने-अपने सामाजिक स्थान से जाति, वर्ग और लिंग की दीवारों को सामने लाते हैं। रमिया दलित समाज की वह बेटी है जो जातिगत अपमान, शोषण और गरीबी के बावजूद शिक्षा को अपना हथियार बनाती है। उसे बचपन में कुएँ पर बाल्टी छूने के कारण झापड़ पड़ते हैं। स्कूल में जाति पूछी जाती है। शिव जैसे लोग उसकी लाचारी का फायदा उठाते हैं और मधु जैसी 'उच्च जाति' की शिक्षिका उसे उसकी जाति के कारण ही अपने से नीचा दिखाती है। फिर भी रमिया अपनी बुद्धि, ज्ञान और आत्म-सम्मान से इन सबका सामना करती है। वह ऐतिहासिक तथ्यों अम्बेडकर के योगदान अंग्रेजों के शोषण और मानवता के विकास की बातों से मधु को जवाब देती है। जिससे उसकी जागरूकता और चेतना स्पष्ट होती है। बैजू का चरित्र भी उसी जातिगत हिंसा का शिकार है। उसे चमार का बेट कहा जाता है। उसे पीटा जाता है उसके प्यार (श्यामली) को उसकी जाति के कारण अपराध माना जाता है। फिर भी बैजू झुकता नहीं वह अपने आत्म-सम्मान के लिए खड़ा होता है, 'हरामी' शब्द पर बिफरता है। राम-कृष्ण-पांडवों को ही 'हरामी' कहकर पूरी धार्मिक व्यवस्था को चुनौती देता है और अंततः इंस्पेक्टर बनकर समाज में अपनी जगह बनाता है। श्यामली उस 'उच्च जाति' का प्रतिनिधित्व करती है जो जाति की दीवारों को मान्यता नहीं देती। वह बैजू से प्रेम करती है। जातिवाद को 'ढोंगीपन' और 'सड़ी दुर्गंध' कहती है और मानव-मानव के बीच प्रेम को सबसे बड़ा धर्म मानती है। मधु और रतन उसी विरोधी पक्ष का प्रतिनिधित्व करते हैं जो अपनी 'श्रेष्ठता' को बनाए रखने के लिए शिक्षा का विरोध करता है। गरीबों को नीचा दिखाता है और किसी भी बदलाव को अपने अस्तित्व के लिए खतरा मानता है। उपन्यास के अंत तक यह स्पष्ट हो जाता है कि जाति-व्यवस्था सिर्फ धार्मिक नहीं बल्कि आर्थिक सामाजिक और राजनीतिक साजिशों का परिणाम है। गरीबी, शोषण और भेदभाव की यह जंजीर तब तक नहीं टूट सकती जब तक शिक्षा और चेतना दोनों न आ जाएँ। लेखिका कावेरी ने मगही-भोजपुरी के आंचलिक शब्दों और सरल हिंदी में इस कथा को इतनी प्रामाणिकता से लिखा है कि हर दृश्य जीवंत हो उठता है।

संदर्भ

1. कावेरी : मिस रमिया, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, 2022, पृष्ठ संख्या, 7
2. वही, पृ, 7

3. वही, पृ, 8
4. वही, पृ, 21-22
5. वही, पृ, 77
6. वही, पृ, 78
7. वही, पृ, 81
8. वही, पृ, 89
9. वही, पृ, 110

■■■